International Journal of Leading Research Publication (IJLRP)

E-ISSN: 2582-8010 ● Website: www.ijlrp.com ● Email: editor@ijlrp.com

महाकवि कालिदास के काव्य में सञ्चार के विविध साधन: अभिज्ञानशाकुन्तलम् का विश्लेषण

विकास सिंह[1], डॉ. वंदना शर्मा[2]

[1]शोधार्थी, [2]आचार्य - संस्कृत
[1]संस्कृत विभाग, कोटा विश्वविद्यालय कोटा
[2]राजकीय महाविद्यालय कोटा

संस्कृत भाषा में सम् उपसर्गपूर्वक चर् धातु से घञ् प्रत्यय करके पुँल्लिङ्ग में 'सञ्चार' शब्द बनता है जिसके अर्थ है- प्रेपण, नेतृत्व करना, सङ्क्रमण, गतिमान्, प्रदर्शन करना, विचारों का आदान-प्रदान, भावाभिव्यक्ति । सञ्चार शब्द अंग्रेजी के Communication का हिन्दी रूपांतर है जो लैटिन शब्द Communis से बना है, जिसका अर्थ है सामान्य भागीदारी युक्त सूचना। चूंकि संचार समाज में ही घटित होता है, अतः हम समाज के परिप्रेक्ष्य से देखें तो पाते हैं कि सामाजिक संबन्धों को दिशा देने अथवा निरंतर प्रवाहमान बनाए रखने की प्रक्रिया ही सञ्चार है। सञ्चार समाज के आरंभ से लेकर अब तक के विकास से जुड़ा हुआ है।

ई. एम. रोजर एवं शूमेकर के अनुसार सञ्चार वह प्रक्रिया है जिसमें स्रोत और श्रोता के मध्य सूचना सञ्चार होता है। इस प्रकार सञ्चार विचारों के आदान-प्रदान से सम्बन्धित है। वारेन वीवर के अनुसार वे समस्त विधियाँ जिसके द्वारा एक मस्तिष्क दूसरे को प्रभावित करता है सञ्चार कहलाता है।

स्टीवेंस के अनुसार सम्प्रेषण एक जीव की उत्तेजनाओं के प्रति विभेदक अनुक्रिया है।

अभिज्ञानशाकुन्तल में सञ्चार अभिज्ञानशाकुन्तल में सञ्चार के अनेकों प्रकारों का वर्णन मिलता है - जैसे आभ्यन्तर सञ्चार, आकाशवाणी, परम्परागत सञ्चार अन्तर्वैयक्तिक सञ्चार, पारलौकिक अन्तर्वैयक्तिक सञ्चार, मानवेतर अन्तर्वैयक्तिक सञ्चार, समूह सञ्चार, स्वप्न सञ्चार, अशाब्दिक सञ्चार, दिव्यदृष्टि द्वारा सञ्चार, सार्वजनिक लोकविमर्श, आदि ।

आभ्यन्तर सञ्चार - यह सर्वविध सञ्चारों का मुख्य केन्द्रविन्दु है। इसकी प्रकृति अभौतिक तथा अन्तर्मुखी होती है। यह आत्मगत होता है। इसमें व्यक्ति स्वयं ही स्वयं के साथ प्रत्येक विषय पर आत्ममन्थन करता है। यहाँ तक कि अन्य किसी भी सञ्चार के करने से पूर्व इस आत्ममन्थन रूपी आभ्यन्तर सञ्चार की प्रमुखता होती है। जैसे- द्वितीय अंक में राजा प्रवेश करके आत्मगत वाक्य बोलता है -

काम प्रिया न सुलभा मनस्तु तद्भावदर्शनाश्वासि ।
अकृतार्थेऽपि मनसिजे रतिमुभयप्रार्थना कुरुते ॥2

अर्थात् यद्यपि शकुन्तला सरलता से प्राप्त होने योग्य नहीं है परन्तु मेरा मन उनके भावों को देखकर सन्तुष्ट है क्योंकि कामदेव के दोनों ओर की इच्छा प्रेम को उत्पन्न करती है।

अभिज्ञानशाकुन्तल के चतुर्थ अंक में विषकम्भक के बाद अनसूया प्रवेश करके दुष्यन्त के लिए कहती है- यद्यपि नाम विषयपराङ्मुखस्य जनस्यैतन्न विदितं तथापि तेन राज्ञा शकुन्तलायामनार्यमाचरितम् अर्थात् यद्यपि विषय से पराङ्मुख हम लोगों को ये सब बातें ज्ञात नहीं हैं, तथापि मै समझती हूँ कि उस राजा ने शकुन्तला के साथ असाधु (अशिष्ट) व्यवहार किया है।3

ठीक इसी के तुरन्त बाद नाटक में कण्वशिष्य आत्मगत वाक्य बोलता है - **यावदुपस्थितां होमवेला गुरवे निवेदयामि** अर्थात् मैं गुरू जी से निवेदन करूँ कि हवन का समय हो गया है।

नाटक के तृतीय अंक में शकुन्तला आत्मगत कहती है- **बलवान् खलु मेऽभिनिवेशः।** इदानीमपि सहसैतयोर्न शक्नोमि निवेदयितुम् । अर्थात् मेरी (राजा के प्रति) अत्यधिक आसक्ति है, परन्तु मैं अब भी सहसा इन दोनों को बतलाने में असमर्थ हूँ। उपर्युक्त तीनों आभ्यन्तर सञ्चार के उदाहरण हैं।

अन्तर्वैयक्तिक सञ्चार - वह सञ्चार प्रक्रिया जिसमें एक व्यक्ति द्वारा प्रेषित सन्देश दूसरे व्यक्ति द्वारा सीधे ग्रहण किया जाता है। दो व्यक्ति जब आपस में बातचीत करते हैं तो अन्तर्वैयक्तिक सञ्चार कहलाता है।

जैसे द्वितीय अंक में विदूषक राजा को बोलता है **अत्रभवान् किमपि हृदये कृत्वा मन्त्रयते। अरण्ये मया रुदितमासीत् ।**

इसके प्रत्युत्तर में राजा बोलता है **किमन्यत् ? अनतिक्रमणीयं मे सुहृद्वाक्यमिति स्थितोऽस्मि ।**
विदूषक पुनः बोलता है चिरं जीव।
एक अन्य उदाहरण में जैसे- चतुर्थ अंक में महर्षि कण्व अपनी पुत्री को आशार्वाद देते हुए कहते
ययातेरिव शर्मिष्ठा भर्तुर्बहुमता भव।
सुतं त्वमपि सम्राजं सेव पुरुमवाप्नुहि ॥5

अर्थात् शर्मिष्ठा जिस प्रकार ययाति की अत्यन्त प्रिय थी ठीक उसी प्रकार तुम भी अपनी पति की प्रियतमा बनो। उसने जिस प्रकार चक्रवर्ती पुत्र को प्राप्त किया था ठीक उसी प्रकार तुम भी चक्रवर्ती पुत्र को प्राप्त करो । उपर्युक्त दोनों उदाहरणों में अन्तर्वैयक्तिक सञ्चार उपस्थित है।

आकाशवाणी - वह बात जो ईश्वर की ओर से आकाश में सुनाई पड़ने वाली मानी जाए, आकाशवाणी कहलाती है। इसे देववाणी भी कहते हैं। आकाशवाणी द्वारा सामान्यतः एकमार्गी सम्प्रेषण होता है किन्तु कहीं कहीं द्विमार्गी सम्प्रेषण भी होता है। आकाशवाणी अलौकिक शक्ति सन्देशों को गन्तव्यस्थल (लौकिक स्थल) तक सीधे पहुँचाती है । तदनन्तर लौकिकशक्ति उसके सन्देशों को ग्रहण कर लौकिक व्यवहार करते हैं। लौकिक शक्तियों द्वारा किसी भी प्रकार की प्रतिपुष्टि नहीं होती। यथा-

शकुन्तला का अपने भरत पुत्र को लेकर महाराज दुष्यन्त के पास जाकर युवराज पद पर अभिषिक्त करने हेतु निवेदन करना।

महाराज दुष्यन्त से कण्व ऋषि के आश्रम में निवास करने वाली कण्वकन्या शकुन्तला के गर्भ से भरत नाम का पुत्र पैदा हुआ है। उस समय देवताओं सहित इन्द्र ने आकर कहा -

शकुन्तले तव सुतश्चक्रवर्ती भविष्यति।
बलं तेजश्च रूपं च न समं भुवि केनचित्।
आहर्ता वाजिमेधस्य शतसङ्ख्यस्य पौरव ॥
अनेकानि सहस्राणि राजसूयादिभिर्मखैः।
स्वार्थं ब्राह्मणसात् कृत्वा दक्षिणाममितां ददात्॥०

अर्थात् हे शकुन्तला ! तुम्हारा यह पुत्र चक्रवर्ती सम्राट होगा। पृथ्वी पर कोई भी इसके बल, तेज और रूप की समानता नहीं कर सकता। जब दुष्यन्त ने सभा में पुत्र सहित शकुन्तला को पहचानने से मना कर दिया तब ऋत्विज, पुरोहित, आचार्य और मन्त्रियों से घिरे दुष्यन्त को सम्बोधित करती हुई आकाशवाणी हुई –

भस्त्रा माता पितुः पुत्रो येन जात स एव सः
मरस्व पुत्रं दुष्यन्त भावामंस्थाः शकुन्तलाम्।
सर्वेभ्यो ह्यङ्गमङ्गेभ्यः साक्षादुत्पद्यते सुतः
आत्मा चैष सुतो नाम तथैव तव पौरव ॥

आहितं दृयात्मनाऽऽत्मानं परिरक्ष इमं सुलभ्
अनन्यां स्वां प्रतीक्ष्व भावमंस्था शकुन्तलाम्।
स्त्रियः पवित्रमतुलमेतद् दुष्यन्त धर्मतः
मासि मासि रजो ह्यासां दुष्कृतान्यपकर्षिहि॥
रतौधाः पुत्रः उन्नयति नरदेव यमक्षयात्
त्वं चास्य धाता गर्भस्य सत्यमाह शकुन्तला ।
जाय जनयते पुत्रमात्मनोऽङ्गं द्विधा कृतम्॥

अर्थात् हे दुष्यन्त ! माता तो केवल माथी (धौंकनी) के समान है। पुत्र पिता ही होता है, वह उसी का स्वरूप है इस न्याय से पिता ही पुत्र के रूप में उत्पन्न होता है। अतः हे दुष्यन्त ! तुम पुत्र का पालन करो। शकुन्तला का अनादर मत करो। हे पौरव ! पुत्र साक्षात् अपना ही शरीर है। वह पिता के सम्पूर्ण अंगो से उत्पन्न होता है। अपने ही द्वारा गर्भ में स्थापित किये हुए आत्मस्वरूप इस पुत्र की तुम रक्षा करो । शकुन्तला तुम्हारे प्रति अनन्य अनुराग रखने वाली धर्मपत्री है। इसे इसी दृष्टि से देखो। इसका अनादर मत करो। स्त्रियाँ अनुपम पवित्र वस्तु है यह धर्मतः स्वीकार किया गया है। प्रत्येक मास में जो इनको रजःस्राव होता है वह इनके सारे दोषों को दूर करता है। हे नरदेव! वीर्य का आघात करने वाला पिता ही पुत्र बनता है और वह यमलोक से अपने पितृगण का उद्धार करता है। तुमने ही इस गर्भ का आघात किया है शकुन्तला सत्य कहती है। जाया (पत्री) दो भागों में विभक्त हुए पति के अपने ही शरीर को पुत्र के रूप में उत्पन्न करती है।

आगे पुनः आकाशवाणी हुई -

तस्माद् भरस्व दुष्यन्त पुत्रं शाकुन्तलं नृप।
अभूतिरेषा यत् त्यक्त्वा जीवेज्जीवन्तमात्मजम्॥

इसलिए हे राजा दुष्यन्त । तुम शकुन्तला से उत्पन्न हुए अपने पुत्र का पालन-पोषण करो। अपने जीवित पुत्र को त्यागकर जीवन धारण करना वड़े दुर्भाग्य की वाता है। आकाशवाणी द्वारा प्राप्त सन्देश ने महाराज दुष्यन्त को

व्यवहार में पूर्ण तरह से बदल दिया जिससे उन्होनें तुरन्त अपने पुत्र और पत्नी को अपनाकर पुत्र सर्वदमन को युवराज पद से अभिषिक्त किया। परम्परागत सञ्चार आधुनिक समय में भी परम्परागत सञ्चार के माध्यमों का प्रयोग होता है। परम्परागत माध्यमों में नृत्य, वाद्य, मेला, मूर्ति, सङ्गोष्ठी आदि शामिल हैं। ये माध्यम किसी विशेषावसर जैसे जन्म, त्यौहार, विशिष्ट कृत्य आदि पर प्रकट होते हैं। जैसे -
महर्षि कण्व की अश्रम में मधुरध्वनि गूँजती रहती थी। राजा दुष्यन्त जब कण्व के आश्रम में प्रवेश करते हैं तव ऋग्वेदी ब्राह्मणों के द्वारा क्रमपूर्वक ऋचाओं का पाठ व सामवेदी महर्षियों के द्वारा 'भारुण्ड सञ्जक' गान करने एवं अथर्ववेद की ध्वनि उन्हें सुनाई पड़ी। इसी सन्दर्भ में 'पूगयज्ञिय' सामागान का भी उल्लेख है। कुछ लोकरञ्जन करने वाले लोगों की बातें भी महर्षि कण्व के आश्रम सुनाई पड़ती थी।

पारलौकिक अन्तरव्यक्तिक सञ्चार जब कोई व्यक्ति किसी अलौकिक शक्ति से संवाद करता है तो उसे अन्तरव्यैक्तिक सञ्चार कहते हैं। जैसे महाभारत में युधिष्ठिर और धर्मराज का संवाद । जैसे पञ्चम अंक के आरम्भ में में राजा दुष्यन्त आकाश में गायन सुनता है -
आकाशे गीयते (आकाश में गाया जाता है) –
अभिनवमधुपलोलुपस्त्वं तथा परिचुम्ब्य चूतमञ्जरीम् ।
कमलवसतिमात्रनिवृत्तो मधुकर विस्मृतोऽस्येनां कथम् ॥१

अर्थात् हे भ्रमर ! नये पुष्परस के लालची तुम आम की मञ्जरी का उस प्रकार रसास्वादन करके अब कमल में निवासमात्र से सन्तुष्ट होकर उस आम्रमञ्जरी को कैसे भूल गये ?
समूहसञ्चार - जब दो या अधिक व्यक्ति आमने सामने बैठकर विचार विमर्श करते हैं तो उसे समूह सञ्चार कहते हैं। जैसे-
चतुर्थ अंक में जब शकुन्तला का दोनों सखियाँ प्रियंवन्दा और अनसूया कालिदास से वार्तालाप करती हैं-
सख्यौ हला शकुन्तले ! अवसितमण्डनासि । परिधत्स्व साम्प्रतं क्षौमयुगलम्। अर्थात् दोनों सखियाँ वोलती हैं हे शकुन्तला तुम्हारा प्रसाधन पूरा हो चुका है अब इन दोनों रेश्मी वस्त्रों को पहन लो। 10
शकुन्तला उत्थाय परिधत्ते अर्थात् शकुन्तला उठकर पहनती है।
सख्यौ अयि आत्मगुणावमानिनि क इदानीं शरीरनिर्वापयित्रीं शारदी ज्योत्स्नां पटान्तेन वारयति। अर्थात् दोनों सखियाँ शकुन्तला को कहती हैं - अरे शकुन्तला ! अपने गुणों का अपमान करने वाली ! शरीर को शान्ति प्रदान करने वाली शरत्काल चाँदनी को भला कौन वस्त्र के छोर से रोक सकता है ?
शकुन्तला - (सस्मितम्) नियोजितेदानीमस्मि । अर्थात् शकुन्तला मुस्कुराकर कहती है अब मैं इस कार्य में लगती हूँ।" इस प्रकार और भी अन्य प्रकार के सञ्चार प्रकृत नाटक में उपलब्ध होते हैं।
सञ्चार की दृष्टि से महाकवि कालिदास विरचित सभी नाटकों में अभिज्ञानशाकुन्तलम् के सदृश उद्धरण प्राप्त होते हैं। विक्रमोर्वशीयम् एवं मालविकाग्निमित्रम् में भी संवाद और सञ्चार के तात्कालिक स्वरूप का पर्याप्त वर्णन मिलता है। विस्तारभय से इस लघु शोधप्रबन्ध में उल्लेख करना सम्भव नहीं है।

अतः स्थालीपुलाकन्याय का अनुसरण करते हुए अभिज्ञान- शाकुन्तलम् के उल्लिखित उद्धहरणों से महाकवि कालिदासकी सञ्चार-दृष्टि का ज्ञान होता है। जैसे विक्रमोर्वशीयम् में निहित कुछ सञ्चार भेद निम्न हैं -
आभ्यन्तर सञ्चार - विक्रमोर्वशीयम् के प्रथम अंक में राजा जब उर्वशी को देखकर बोलता है कि आपकी सखियाँ बड़ी ही दुःखी दिखाई दे रही हैं। इस प्रत्युत्तर में उर्वशी नायिका मन में आभ्यन्तर सञ्चार करती हुई कहती है-

अमिजं वखु ते वअणम् अहवा चन्दादो अमिअं ति किं अच्चरिअम् (अमृतं खलु ते वचनम्। अथ वा चन्द्रादमृतमिति किमाश्चर्यम् ।) अर्थात् आपके वचन तो अमृत हैं पर यदि चन्द्रमा से अमृत बरसे तो आश्चर्य ही क्या ? 12

जब रथ से उतरती हुई उर्वशी अचानक राजा से जा लगती है तो राजा मन ही मन सोचता है-

यदिदं रथसङ्क्षोभादाङ्गेनाङ्ग मयायतेक्षणया।
स्पृष्टं सरोमकङ्कटमङ्कुरितं मनसिनेनेव ॥ 13

अर्थात् इस उबड़-खाबड़ भूमि पर रथ का उतरना मेरे लिए अच्छा ही हुआ, क्योंकि रथ के हिलने डुलने से इस बड़ी बड़ी आँखों वाली सुन्दरी के शरीर से मेरे शरीर के बार-बार छोने पर जो रोमाञ्च हो गया है वह ऐसा जान पड़ता है मानो प्रेम के अङ्कुर फूट आये हों।

उपरोक्त दोनों उदाहरणों में क्रमशः नाटक की नायिका उर्वशी एवं नायक राजा स्वगत रूप से आभ्यन्तर सञ्चार वर्णित है।

समूहसञ्चार - समूह सञ्चार के अतिरिक्त दो या अधिक पात्रों के बीच संवाद होता है। जैसे -
उर्वशी चित्रलेखा को कहती है हला चित्तलेहे सही-अणा कहि क्खु भवे **(सखि चित्रलेखे । सखीजनः कुत्र खलुः भवेत् ?)** अर्थात् सखी चित्रलेखा ! हमारी सखियाँ सब कहाँ होगी ?

प्रत्युत्तर में चित्रलेखा कहती है सहि! अभ अप्पदाई महाराओ जाणादि । (सखि । अभयप्रदायी महाराजो जानाति ।) अर्थात् हे सखि ! हमें बचाने वाले महाराज ही जानते होंगे। इस के प्रत्युत्तर में राजा कहता है-

यदृच्छया स्वं सकृदप्यबन्ध्ययोः पथि स्थिता सुन्दरि यस्य नेत्रयोः।
स्वया विना सोऽपि समुत्सुको भवेत्सखीजनस्ते कुमुदार्द्रसौहृदः ॥ 14

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

1. संस्कृत-हिन्दीशब्दकोश, वामन शिवराम आप्टे, पृ. - 1163
1. 2 अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 2.1
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. शिवबालक द्वेवेदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ - 253
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. शिवबालक द्वेवेदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ - 189
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 4.7
5. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 14, श्लोक 21,22
6. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 14, श्लोक - 110-112
7. महाभारत, आदिपर्व, अध्याय 14, लोक 113
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5.1
9. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. शिवबालक द्वेवेदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ - 270
10. अभिज्ञानशाकुन्तलम्, डॉ. शिववालक द्वेवेदी, हंसा प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ - 206
11. कालिदास ग्रन्थावली, आचार्य सीताराम, उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृष्ठसंख्या-145
12. कालिदास ग्रन्थावली, आचार्य सीताराम, उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृष्ठसंख्या-146
13. विक्रमोर्वशीयम्, 1.11
14. मालविकाग्निमित्रम्, 3.1
15. कालिदास ग्रन्थावली, आचार्य सीताराम, उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, पृष्ठसंख्या-301